International Journal of Scientific Research in Science and Technology
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X (www.ijsrst.com)

प्राथमिक शिक्षा के सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं रवीन्द्र नाथ टैगोर के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन्

शोधार्थी - प्रतीक त्रिपाठी, कलिंगा विश्वविद्यालय, नया रायपुर, छत्तीसगढ़
डॉ हर्षा पाटिल प्रवक्ता, शिक्षाशास्त्र विभाग,कलिंगा विश्वविद्यालय, नया रायपुर, छत्तीसगढ़

Article Info
Volume 8, Issue 6
Page Number : 442-447

Publication Issue
November-December-2021

Article History
Accepted : 05 Dec 2021
Published : 20 Dec 2021

प्रस्तावना :–

शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली समाज एवं राष्ट्र के पुर्ननिर्माण की एक शक्तिशाली शक्ति है। जिसका न केवल सामाजिक प्रगति और समाजोत्थान से सम्बन्ध है अपितु राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक नैतिक आध्यात्मिक और अन्तर्राष्ट्रीय प्रकरणों के उत्थान का वाहक भी है। इसी संदर्भ में, **राष्ट्रपिता महात्मा गांधी**[1] का का विचार उल्लेखनीय है कि– शिक्षा व्यक्ति के पूर्ण जीवन की तैयारी है, पर्यावरण के साथ समायोजन है, उसकी प्रकृति की पूर्ण साधिका है और उसके चरित्र के निर्माण के साथ–साथ उसके व्यक्तित्व के निर्माण और विकास की कारिका भी है। शिक्षा के निहित कार्य दायित्वों में केवल पठन–पाठन का विकास ही नही है वरन यह भी वांछनीय है कि व्यक्तित्व की कौशलताओं में अभिवृद्धि करे। इसीलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने बालक की शिक्षा में स्वच्छ हाथ, पवित्र हृदय और उन्नत मस्तिष्क की अभिकल्पना की है। इसी दृष्टिकोण में रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी शिक्षा में सामाजिक और नैतिक मूल्यों में उन्नयन कर एक वृहद संकल्पना **विश्व राष्ट्र बोध** को संकल्पित किया है। इन्ही दृष्टिकोणों के आलोक में कहा जा सकता है कि

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

शिक्षा मात्र बौद्धिक विकास ही नही है अपितु उससे भी अधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति और समाज तथा राष्ट्र और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुमुखी मंगल कामना के साथ लोक कल्याण और हितार्थ अभ्युत्कर्ष की पद्धति का विकास है।

आज शिक्षा से आपेक्षित है कि वह मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष भौतिक, सामाजिक, अध्यात्मिक, सांवेगिक, बौद्धिक तथा समृद्धिता के गुणात्मक और मात्रात्मक आयामों से सम्पृक्त रहे। शिक्षा में विज्ञान और तकनीक के प्रयोगों से शान्ति, सामंजस्य और समृद्धता की पूरकता से एक उपयोगी और सुदृढ समाज की स्थापना की संकल्पना की जाती है। और ये सब तभी हो सकेगा जब शिक्षा में गुण उपार्जिता निरन्तर बढ़ती रहे। इसी संदर्भ में भारतीय समाज के जननायकों में महर्षि दयानन्द सरस्वती तथा ठाकुर रवीन्द्रनाथ टैगोर के द्वारा संकल्पित शिक्षा आयामों से समाज में सर्वतोमुखी क्षमता का विकास हो सकेगा। सत्य, दया, वैदिक संस्कृति, शांति की चतुर्दिक समुत्कर्ष की स्थापना हो सकेगी, आज जिसकी भारतीय जनमानस को नितान्त आवश्यकता है।

प्राथमिक शिक्षा पर विशेष बल :– दयानंद जी प्राथमिक शिक्षा पर विशेष बल देते हुए निम्नांकित बातों को अपनी पुस्तक **सत्यार्थ प्रकाश** में प्रस्तुत किया है।

- बालक की अनौपचारिक शिक्षा के संबंध में माता का गर्भावस्था से ही सतर्क रहना चाहिए।
- माता–पिता को गर्भाधान के समय तथा इसके पश्चात् मादक वस्तुओं का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- माता–पिता को सात्विक भोजन लेते हुए पवित्र विचार रखने चाहिए।
- बालक की प्रारंभिक शिक्षा माता–पिता द्वारा संचालित होनी चाहिए।
- बालक को 5 वर्ष की आयु में गायत्री मंत्र रटा देना चाहिए।

- माता–पिता को बालक की शिक्षा में ज्ञान, उत्तम संगति तथा इच्छा दमन की भावनाएं उत्पन्न करनी चाहिए।
- शिक्षा आश्रम धर्म पर आधारित होनी चाहिए।
- बालक की औपचारिक शिक्षा, उपनयन संस्कार के पश्चात् आरंभ होनी चाहिए।
- 8 वर्ष की आयु में बालक तथा बालिकाओं को पाठशाला में भेज देना चाहिए।
- पाठशाला नगर से 5 मील की दूरी पर किसी शांत स्थान पर स्थित होनी चाहिए।
- पाठशालाएँ जीवन–दर्शन पर आधारित होनी चाहिए।
- बालक तथा बालिकाओं के लिए अलग–अलग पाठशालाएँ होनी चाहिए।
- ब्राह्मणों तथा अन्य सभी वर्गो के बालक तथा बालिकाओं को शिक्षा अनिवार्य रूप से मिलनी चाहिये।
- शिक्षा प्राप्त करते समय बालक को दैहिक सुख की ओर अधिक ध्यान न देकर ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।
- बालकों को पौष्टिक भोजन मिलना चाहिए।
- शिक्षा 25 वर्ष की आयु तक प्राप्त करनी चाहिए।
- शिक्षा के द्वारा बालक गुणों को प्राप्त करें तथा दोषों को त्योग देना चाहिए।
- बालकों को दण्ड देते समय माता–पिता तथा शिक्षक को ईष्या–द्वेष से प्रभावित नहीं होना चाहिए।
- शिक्षा तर्क पर आधारित होनी चाहिए।
- गुरु–शिष्य के संबंध प्राचीन भारत के से होने चाहिए।
- पाठ्यक्रम के अंतर्गत वेदों, वेदांतों, उपनिषदों तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

इस प्रकार महर्षि दयानंद ने अध्ययन के विषय में एक विस्तृत तथा निश्चित योजना प्रस्तत की है। जिसमें उन्होंने निम्नांकित मूल तत्वों को स्थान दिया था–

- सर्वप्रथम बालक–बालिकाओं को पाणिनी के ध्वनि सिद्धांत का बोध कराते हुए शुद्ध उच्चारण करना चाहिए।

- ध्वनि सिद्धांत के पश्चात् बालकों को पाणिनी तथा पतंजलि के व्याकरण संबंधी पांच ग्रंथों का अध्ययन तीन वर्षों में पूरा कराना चाहिए।
- व्याकरण सीखने के पश्चात् बालकों को 8 मास के भीतर यास्क के निघंटु और निरुक्ति का ध्यान कराना चाहिए।
- तत्पश्चात् 4 महीने के अंतर्गत बालकों को पिंगलाचार्यकृत 'छंदोग्रन्थ' का अध्ययन कराना चाहिए जिससे वे श्लोक सीख जाएं।
- इसके पश्चात् सुसंस्कृत बनने तथा बुराइयों से बचने के लिए छात्रों को मनुस्मृति, बाल्मीकि रामायण तथा विदुरनीति एवं महाभारत के चुने हुए अंश पढ़ने चाहिए।
- सुसंस्कृत बनाने के पश्चात् बालकों को मीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य तथा वेदांत का अध्ययन कराना चाहिए। पर स्मरण रहे कि वेदांत शास्त्र का अध्ययन कराने से पहले दसों उपनिषदों का अध्ययन कराना परम आवश्यक है।
- तत्पश्चात् छात्रों को चारों ब्राह्मणों (तेतरेय, शतपथ, सम और गोपथ) के साथ–साथ चारों वेदों को पढ़ाया जाए।
- वेदों के अध्ययन के पश्चात छात्रों को 10 वर्ष तक उपवेदों (आयुर्वेद. धनुर्वेद. गंधर्ववेद तथा अथर्ववेद) का अध्ययन कराना चाहिए।
- अंत में छात्रों को ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन कराना चाहिए। स्मरण रहे कि ज्योतिष–शास्त्र के अंतर्गत गणित, बीजगणित, रेखागणित, भूगोल, भूगर्भविद्या, खगोल विद्या आदि विषय सम्मिलित होने चाहिए।

प्राथमिक शिक्षा पर विशेष बल : गुरुदेव मनुष्य को भौतिक एवं आध्यात्मिक तत्वों का येाग मानते थे और यह मानते थे कि मनुष्य का विकास उसकी इन दोनों शक्तियों पर निर्भर करता है। इन्होंने शिक्षण की किसी नई विधि का निर्माण तो नहीं किया परन्तु अपने समय की शिक्षण विधियों में सुधार के लिए सुझाव अवश्य दिए हैं। इन्होंने अपने समय की पुस्तकीय एवं कथन विधियों का कड़ा विरोध किया और इस बात पर बल दिया कि बच्चों को जो कुछ भी सिखाया जाए उन्हें जीवन की वास्तविक परिस्थितियों में रखकर, स्वयं करके, स्वयं के

अनुभवों द्वारा सिखाया जाए। इन्होंने अपने समय की अंग्रेजी माध्यम वाली शिक्षा का भी कड़ा विरोध किया और मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा दिए जाने पर बल दिया। इनके द्वारा स्थापित विश्व भारती जो आज पूर्व प्राथमिक से लेकर कक्षा 12 तक की शिक्षा मातृभाषा बंगाली के माध्यम से ही दी जाती है। उच्च स्तर पर अंग्रेजी को माध्यम बनाए रखना विवशता है। गुरुदेव द्वारा प्रतिपादित इन शिक्षण सिद्धान्तों को हम निम्नलिखित रूप में क्रमबद्ध कर सकते हैं–

(1) बच्चों को जबरन कुछ मत सिखाओ, उन्हें पहले सीखने के लिए प्रेरित करो।
(2) बच्चों को जो कुछ भी सिखाना हो, जीवन की वास्तविक क्रियाओं द्वारा सिखाओ।
(3) बच्चों को ज्ञानेन्द्रियों के प्रयोग के अवसर दो, उन्हें स्वयं करके स्वयं के अनुभव से सीखने दो।
(4) बच्चों को अंग्रेजी के स्थान पर मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा दो।
(5) किसी भी शिक्षण विधि का प्रयोग करो पर वह रुचिपूर्ण हो और शिक्षार्थी उसमें सक्रिय रूप से भाग लें।
(6) बच्चों को कठोर नियन्त्रण से मुक्त रक्खों, उन्हें कार्य करने एवं सोचने की स्वतन्त्रता दो।
(7) किसी भी स्थिति में बच्चों के साथ प्रेम एवं सहानुभूति पूर्ण व्यवहार करो।

गुरुदेव अनुशासन के महत्व को स्वीकार करते थे, परन्तु अनुशासन को ये बाह्य व्यवस्था के रूप में नहीं, आन्तरिक भावना के रूप में स्वीकार करते थे। इस आन्तरिक भावना के विकास के लिए ये दण्ड व्यवस्था का विरोध करते थे। इनका स्पष्टीकरण था कि दण्ड से छात्र उदण्ड होते है, उनमें विरोध की भावना का विकास होता है। गुरुदेव आत्मानुशासन के पक्ष में थे और उसको प्राप्ति के लिए ये उच्च सामाजिक पर्यावरण की आवश्यकता पर बल देते थे। इनका स्पष्ट दृष्टिकोण था कि यदि विद्यालयों के शिक्षक ज्ञानी एवं चरित्रवान हैं और बच्चों के साथ प्रेम और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करते हैं तो बच्चे स्वयं अनुशासन का पालन करेंगे। स्वानुशासन के विकास के लिए ये यह भी आवश्यक समझते थे कि विद्यालयों में खेल–कूद तथा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन हो। इनका अनुभव था कि उच्च सामाजिक पर्यावरण में ही मनुष्य को साधना के अवसर मिलते हैं और वह अनुशासन में रहना

सीखता है। ऐसे पर्यावरण में छात्र स्वयं अनुशासित रहते हैं और यदि उनमें कोई मूल होती है तो वे स्वयं उसे दूर करते हैं। इनके द्वारा स्थापित विश्व भारती का सम्पूर्ण परिवेश संस्कार प्रधान है, शिक्षक और छात्र सभी सादा जीवन जीते हैं, सभी पूर्णरूप से अनुशासित रहते हैं।

- रबीन्द्रनाथ टैगोर (1951) : दि सेण्टर ऑफ इण्डियन कल्चर, विश्वभारती बुकशाप प्रकाशन
- रबीन्द्रनाथ टैगोर (1961) : शिक्षा प्रकाशन सन्मार्ग प्रकाशन, 16 यू0पी0 बैगलोरोड, दिल्ली
- सरस्वती दयानन्द: (१९९४) बाल सत्यार्थ प्रकाश प्रकाशन राजपाल एंड स० दिल्ली